SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

रंगभेद एवं सामाजिक अस्पृश्यता के खिलाफ महात्मा गाँधी की भूमिका

रवि रंजन, Ph.D., शोध निर्देशक, **मिथिलेश कुमार,** शोधार्थी, इतिहास विभाग
आईसेक्ट विश्वविद्यालय, हजारीबाग, झारखण्ड, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Authors
रवि रंजन, Ph.D., शोध निर्देशक
मिथिलेश कुमार, शोधार्थी

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 05/12/2023
Revised on : -----
Accepted on : 13/12/2023
Plagiarism : 02% on 05/12/2023

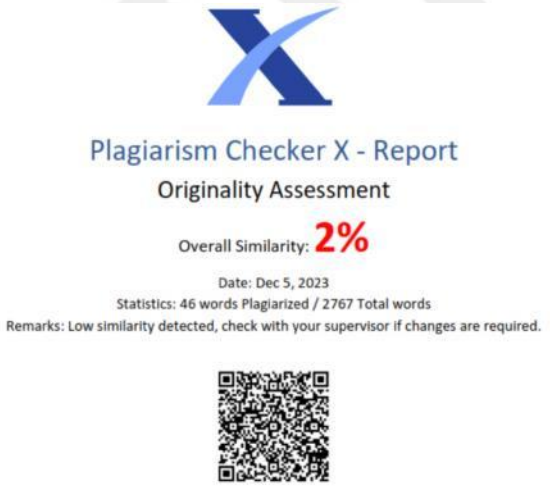

शोध सार

आधुनिक भारत के इतिहास में गांधीजी एक महान व्यवहारिक राजनीतिज्ञ, कुशल दार्शनिक एवं सच्चे कर्मयोगी थे जिन्होनें सत्य एवं अहिंसा से युक्त नैतिकता आधारित सामाजिक समानता एवं राजनीति का मार्ग प्रशस्त किया। सामाजिक समरसता की बात की जाए तो प्राचीन काल में कोई जाति व्यवस्था नहीं थी। कर्मों के आधार पर समाज चार वर्णों में विभाजित था परंतु कालांतर में यही वर्ण व्यवस्था जाति व्यवस्था का रूप ले लिया तथा उच्च वर्ग के लोगों द्वारा निम्न वर्ग के लोगों का निरंतर शोषण किया जाने लगा। यही से उच्च और नीच के इस भेदभाव ने 18वीं एवं 19वीं सदी आते–आते उग्र रूप धारण कर लिया। इसके बाद अनेको समाज सुधारक ने इस भेदभाव को दूर करने का प्रयत्न किया। गांधी जी उन्हीं समाज सुधारको में से एक थें। महात्मा गाँधी का जीवन आज भी प्रासांगिक है। सामाजिक समरसता भारतीय संस्कृति का – मौलिक चिंतन है। महात्मा गाँधी के विचारों में भारतीय संस्कृति के मौलिक चिन्तन का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। उन्होंने भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान ही समझ लिया था कि बिना सामाजिक समरसता के राष्ट्रीय एकता की स्थापना नहीं की जा सकती। यही कारण है कि स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान सामाजिक सौहार्द की स्थापना, रंगभेद एवं अस्पृश्यता की समाप्ति, सर्वधर्म–सम्मान, महिला उत्थान, कार्यक्रम भंगी मुक्ति कार्यक्रम, स्वच्छता, ग्रामोदय अभियान, मद्य निषेध एवं अशिक्षा के उन्मूलन द्वारा चरित्र के निर्माण आदि पर बल दिया। इन उद्देश्यों के माध्यम से गांधीजी अपने राष्ट्रीय एकता के लक्ष्य को प्राप्त कर स्वतंत्रता आंदोलन में विजय प्राप्त करना चाहते थे ताकि भारत एक शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में विश्व में अपना स्थान बना सके।

मुख्य शब्द

दार्शनिक, निरंतर शोषण, रंगभेद, अस्पृश्यता, सर्वधर्म सम्मान, महिला उत्थान.

तथ्य–विश्लेषण

रंगभेद (अपारथाइड) एक अफ्रीकन शब्द है जिसे शाब्दिक रूप से "आवार्टहुड भी कहा जाता है जिसका अर्थ है नस्लीय पृथक्करण अर्थात मनुष्य के चमड़ी के रंग के आधार पर भेदभाव करना। रंगभेद एक संस्थागत नस्लीय अलगाव की एक प्रणाली थी जो दक्षिण पश्चिम अफ्रीका और दक्षिण अफ्रिका में मौजूद थी। रंगभेद 1948 से 1990 के दशक की शुरूआत तक था। संयुक्त राष्ट्र द्वारा सन् 1973 ई० में रंगभेद के अपराध के गोपन और दंड पर अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमय अंगीकार किया गया था जिसमें रंगभेद को– "मानवता के विरुद्ध अपराध घोषित किया गया। ये अपराध अन्तर्राष्ट्रीय कानून व सिद्धांतों – विशेषकर संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के प्रयोजनों तथा सिद्धांतों का उल्लघंन करते हों।" अपने अनुच्छेद (2) में संयुक्त राष्ट्र रंगभेद के प्रति अमानवीय कार्यों को इस प्रकार दर्शाता है– (i) जीवन जीने का अधिकार समाप्त करना। (ii) नस्लीय समूहों को दण्ड या उत्पीड़न द्वारा मानसिक हानि पहुँचाना। (iii) लोगों पर मनमानी गिरफ्तारी एवं गैरकानूनी मुकदमा दर्ज करना। (iv) उन नस्लीय समूहों पर रहन–सहन की शर्ते थोपना। (v) इनपर राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रतिबंध थोपना ताकि वे खुलकर अपना जीवन न जी सके और न ही कोई सामाजिक कार्यों में रुचि ले सके। (vi) नस्लीय समूहों की भूमि–सम्पत्ति का स्वामित्व हरण करना। (vii) इन समूहों के सदस्यों में अंतर्विवाह निषेध करना। (viii) श्रमिको को बंधुआ मजदुरी में लगाकर उनका शोषण एवं उन्हें मूल अधिकारों से वंचित करना आदि।

यद्यपि दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद व्यवस्था सन् 1948 ई० में स्थापित कर प्रारंभ की गईं थी व वहाँ पिछली सरकारों ने उन्नसवीं और बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के दौरान बहुत से कानून पारित किए गए थे जो रंगभेद के पूर्वगामी थे। ब्रिटिश उपनिवेशी शासकों ने उन्नसवीं शताब्दी के दौरान 'पास लॉज' (Pass Laws) अधिनियमित किए गए थे, जिसमे श्वेतों द्वारा अधिग्रहीत क्षेत्रों में अश्वेतों का आवागमन प्रतिबंधित किया गया था। अश्वेतों को अंधेरा होने के बाद केप कॉलोनी और नटाल के कस्बों की गलियों में जाने की अनुमति नहीं थी और हर समय अपने पास पहचान–पत्र रखने आवश्यक थे। धीरे–धीरे देखते ही देखते सन् 1905 से 1946 के बीच अन्य कई महत्वपूर्ण कानून पारित किए गए और अश्वेतों एवं भारतीयों के बीच बहुत सारे प्रतिबंध लगाए गए। जब 1905 ई० में 'रेग्यूलेशन बिल' पारित की गई तो इसके अन्तर्गत अश्वेतों को मतदान के अधिकार से वंचित कर दिया गया, उन्हें अपने निर्धारित क्षेत्र तक सीमित रखा गया और एक बदनाम 'पास सिस्टम' आरंभ किया गया। 1910 में पारित दक्षिण अफ्रीका अधिनियम के द्वारा उन्हें मताधिकार से वंचित कर दिया एवं नस्लीय समूहों पर पूरा राजनीतिक नियंत्रण स्थापित कर दिया। इसके साथ–साथ अश्वेतों के संसद में बैठने के अधिकार को भी समाप्त कर दिया गया। यहां तक कि 'नेटिव लैंड अधिनियम–1913' के द्वारा अश्वेतो को 'रिजर्वो' के बाहर की भूमि खरीदने से रोक दिया गया।

रंगभेद आंदोलन 20वीं शताब्दी का पहला सबसे सफल अंतर्राष्ट्रीय आन्दोलन था जिसमें 'नेल्शन मंडेला' जैसे महान अफ्रीकी नेताओं ने श्वेतों के खिलाफ संघर्ष कर अश्वेतों को इस व्यवस्था से मुक्ति दिलाई जिसके वजह से उन्हें 'राबेन द्वीप' के कारागार में 27 वर्ष बिताने पड़े। 1990 में श्वेत सरकार से हुए एक समझौते के पश्चात् उन्हें जेल से रिहा किया गया। उन्होंने इसके बाद राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय दोनों स्तर पर रंगभेद का खुलकर विरोध किया और चार वर्ष बाद 10 मई 1994 ई० को इन्हें दक्षिण अफ्रीका का राष्ट्रपति बनने का गौरव प्राप्त हुआ।

रंगभेद के विरुद्ध आंदोलन के दो मुख्य पहलु थे – (i) दक्षिण अफ्रीका में नस्लीय रंगभेद शासन व्यवस्था को अस्थिर करने के लिए आंतरिक अभियान चलाना और (ii) राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक प्रतिबंधों के लिए बाहरी–अभियान चलाना। दरअसल वास्तव में देखा जाए तो यह आंदोलन केन्द्र में अश्वेत अफ्रीकियों का श्वेतों के वर्चस्व को हटाने का एक संघर्ष था। यह एक ऐसा आंतरिक आंदोलन था जो – अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्रवाई के लिए उत्प्रेरक बना और एक ऐसा महत्वपूर्ण कड़ी बना जिसमें समग्र रूप से अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इस आंदोलन को निरंतरता प्रदान की।

रंगभेद के खिलाफ गाँधी जी की भूमिका

आधुनिक भारत के इतिहास में गांधी जी के विचारों को जानना और समझना भारतीयों की प्रमुख विडंबनाओं में से एक है जहाँ गाँधी जी को बहुत कम लोगों ने गहराई से पढ़ा और जाना है। वर्तमान परिदृश्य में गांधी जी

के प्रति विचार और विमर्श का दायरा बहुत सीमित हो गया है और दृष्टिकोण संकीर्ण। जहाँ तक गांधीजी के दक्षिण अफ्रिका जाकर रंगभेद के खिलाफ संघर्ष करने की बात है तो – सेठ अब्दुल्ला के निमंत्रण पर 1893 ई० में वे दक्षिण अफ्रीका गए। चुंकि अब्दुल्ला दक्षिण अफ्रीका में एक जाने माने व्यवसायी थे। अब्दुला का उनके अपने खास रिश्तेदारों के साथ कुछ व्यापारिक मसला होने के कारण उनकी ओर से पैरवी करने के लिए एक काबिल वकील की आवश्यकता थी इसलिए सेठ अब्दुल्ला ने उन्हें मुकदमा लड़ने के लिए दक्षिण अफ्रीका बुलाया था। गाँधी जी डरबन से प्रिटोरिया जाने के लिए रेल के प्रथम श्रेणी का टिकट लेकर बैठें थे जहाँ उन्हें कुछ यूरोपियनों ने अश्वेत कहकर सामान सहित नीचे फेंक दिया जिससे श्वेतों के खिलाफ उनके मन में एक जिद्द उत्पन्न हुई और फिर यहाँ से गांधी जी में नए–नए मुद्दों के खिलाफ यूरोपियनों के प्रति संघर्ष करने का सिलसिला चल पड़ा 'रंगभेद' भी उन्ही मुद्दों में से एक है। गाँधी जी ने इस 'रंगभेद' के खिलाफ दक्षिण अफ्रीका में कुछ ऐसी भूमिका निभायी जिसके कारण वे दक्षिण अफ्रीका ही नहीं बल्कि भारत के भी राजनीतिक क्षितिज पर छा गए।

दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद के विरोध में आंदोलन के बीज गांधीजी द्वारा ही बोए गए थे। उन्होंने पहली बार वहाँ उपनिवेश विरोधी और रंगभेद विरोधी आंदोलन का नेतृत्व किया और 22 अगस्त 1894 ई० को 'नटाल भारतीय काँग्रेस' की स्थापना की।

चुंकि अफ्रीका के यूरोपीय निवासियों और प्रशासकों ने गन्ना, कॉफी, चाय आदि के उत्पादन के लिए भारत से श्रमिक लाकर वहाँ बसाये थे और उनसे प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर करवाकर मनमानी शर्ते लागू कर दी थी। दशकों तक दक्षिण अफ्रीका में बसने के पश्चात् श्रमिक वही रहना चाहते थे। यहाँ तक की भारत से आकर व्यापारी भी वही रहने लगे थे। इस कारण उन्हें भारत भेजने की धमकी दी जाती थी और उनके लिए भेदभाव पूर्ण नियम बनाए जाते थे तथा तरह–तरह के नस्लभेदी कानूनो का उन्हें शिकार होना पड़ता था। यूरोपीय प्रशासक उन्हें गुलामों की स्थिति में रखकर उन्हें नागरिक अधिकारों से वंचित रखना चाहते थे। ऐसे में गाँधी जी ने इन प्रवासी भारतीयों का प्रतिनिधित्व करते हुए उनके खिलाफ लंबा संघर्ष किया।

गाँधीजी द्वारा दक्षिण अफ्रीका में प्रवासी भारतीयों और वहाँ की आम–आवाम के विरुद्ध अपनाए गये भेदभाव पूर्ण नीति एवं नस्लभेदी कानूनों के खिलाफ यूरोपीय प्रशासकों के इस राजनीतिक कार्यों को चुनौती दे डाली। दक्षिण अफ्रीका में महात्मा गांधी के राजनीतिक कार्यों की दो भागों में बाँटा जा सकता हैः

i) 1894 से 1906 तक उन्होंने प्रवासी भारतीयों को अधिकार दिलाने हेतु संबंधित विभागों में तरह–तरह के प्रतिवेदन दिए। नस्लभेदी प्रतिबंधों की हटाने हेतु समय–समय पर ब्रिटेन की सरकार और संसद तक प्रार्थना पत्र पहुँचाए। परन्तु गाँधी जी को अपने आशानुरूप इस अभियान में कोई सफलता हाथ नहीं लगी व यूरोपीय प्रशासकों द्वारा इन प्रतिवेदनों के प्रत्युत्तर में सन् 1907 ई० में प्रवासी भारतीयों के खिलाफ और भी कठोर नस्लभेदी नियम बनाने की ओर कदम बढ़ाने लगे।

(ii) इस दौरान 1907 से 1914 तक इस परिस्थिति का मुकाबला करने के लिए उन्होंने अपनी नीति बदलकर व्यवहारिक दृष्टिकोण अपनाते हुए इस भेदभाव पूर्ण नस्लभेदी कठोर, कानूनों के खिलाफ 'सत्याग्रह' शुरू कर दिया जो 1914 ई० तक चलता रहा। सत्य और अंहिसा के मार्ग पर चलकर उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में फँसे भारतीयों को सविनय प्रतिरोध करने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने अपने इस सिद्धांत की व्याख्या करते हुए कहा कि सत्य के मार्ग पर चलकर विरोधी का हृदय परिवर्तन कराया जा सकता है। इस दौरान उन्होंने यह भी कहा था कि अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उचित साधन अपना कर ही विरोधी पर नैतिक प्रभाव डाला जा सकता है। इस प्रकार गांधी जी के कहने पर वहाँ बसे सैकड़ों भारतीयों ने वहाँ की सरकार द्वारा प्रस्तावित पंजीकृत भेदभावपूर्ण आज्ञा को मानने से इनकार करके एक लम्बा संघर्ष छेड़ दिया जिसके कारण वहाँ की सरकार ने उन्हें जेल भेजने एवं तरह–तरह की यातनाएँ देने में पीछे नहीं रही। इसके बावजूद भी गाँधी जी का इस भेदभाव के प्रति संघर्ष नहीं रूका परिणामतः दक्षिण अफ्रीका की सरकार को प्रवासी भारतीयों के साथ समझौता करना पड़ा। इस प्रकार दक्षिण अफ्रीकी सरकार द्वारा पंजीकृत नियमों में संशोधन करना उनकी पहली सफलता थी।

सामाजिक अस्पश्यता के विरूद्ध गाँधी जी की भूमिका

इतिहास साक्षी है कि 'अस्पृश्यता' भारतीय सामाजिक व्यवस्था की शताब्दियों से एक अभिन्न अंग रही है। यहाँ तक की धार्मिक व्यवस्था भी इससे अछूता नहीं रहा। गाँधी जी के युग में अस्पृश्यता देश के बुनियादी कानून के माध्यम से अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों, दलितों, शोषितों एवं पीड़ितों की सामाजिक समता एवं राजनीतिक अधिकारों को मान्यता देने वाली एक क्रांति थी।

महात्मा गांधी ने अस्पृश्यता को समाज का एक कलंक एवं घातक रोग माना जो न केवल स्वयं को बल्कि पूरे समाज की समूल नष्ट कर देता है। उन्होंने कहा था इसी अस्पृश्यता के कारण, हिन्दू धर्म पर कई प्रकार के संकट आए हैं। वे कुछ सवर्ण हिन्दुओं के इस तर्क से सहमत नहीं थे कि 'अस्पृश्यता' हिन्दू धर्म का एक अभिन्न अंग है जिसे मिटाना संभव नहीं है। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कोई यह सिद्ध कर दे तो मैं कम–से–कम उसके विरुद्ध विद्रोह कर दूँगा।

निश्चित ही वह एक गौरवशाली एवं ऐतिहासिक पल था जब 29 अप्रैल 1947 ई० को संविधान सभा ने प्रस्ताव पारित कर यह घोषणा की कि 'अस्पृश्यता एक अपराध' है। यह प्रस्ताव सरदार पटेल द्वारा पेश की गई थी बाद में यही घोषणा भारतीय संविधान के अनुच्छेद (17) के रूप में सम्मिलित कर लिया गया। संविधान निर्माताओं ने इस निर्णय की तुलना अमेरिका के उन्मूलन (1965) और रूस में कृषि दासो की मुक्ति (1868) से भी की जा सकती है। इस प्रकार इस अस्पृश्यता उन्मुलन की घटना का विभिन्न समाचार–पत्रों ने स्वागत किया परंतु विडंबना यह रही कि किसी भी देशी–विदेशी समाचार पत्र ने अस्पृश्यों के अधिकारों के लिए वर्षों से कार्यरत डॉ. भीमराव अंबेडकर का उल्लेख तक नहीं किया।

इसमें कोई संदेह नही कि गाँधी और अंबेडकर दोनों ने अस्पृश्यता मिटाने एवं अस्पृश्यों के जीवन–परिस्थितियों में सुधार लाने के लिए निरंतर प्रयत्न किया। किन्तु 1932 में गांधी के उपवास के बाद एक छोटी–सी अवधि को छोड़कर दोनों के विचारों में ही नहीं बल्कि संबंधों में भी गहरी कटुता रही।

गाँधी जी के संवेदनशील मन में अन्याय पीड़ित अछूतों के प्रति गहरी सहानुभुति थी। वे बचपन के दिनों से ही इसे नापसंद करते थे गांधी जी ने अस्पृश्यता की खुली निंदा दक्षिण आफ्रीका से ही शुरू कर दी थी। रंगभेद एवं नस्लवाद के विरुद्ध संघर्ष के दौरान उन्हें यह प्रश्न अकसर पूछा जाता था कि सदियों से अछूता के साथ गुलामों से भी बदत्तर बर्ताव करनेवाले भारतियों को गोरों के साथ बराबरी की मांग करने का क्या अधिकार है? जवाब में गांधी जी कहते थे– अस्पृश्यता का मूल हिन्दू धर्म में नहीं बल्कि हिन्दुओं के पतन और पराभव के दौर में पनपा एक कलंक है। दक्षिण अफ्रीका से 1915 ई० में लौटने के बाद भी भारत भर में वे अस्पृश्यता के विरुद्ध घुम–घुमकर प्रचार करते रहे।

एम. एस. गिल ने अपनी कृति – 'गाँधीः ए सबलाइम फेल्योर' में लिखा है कि भारत में हिन्दू–मुस्लिम एकता को स्थापित करने के बाद गांधी जी के पास अस्पृश्यता को मिटाना एक बहुत बड़ी समस्या थी क्योंकि इसके रहते भारत की आजादी बेमानी साबित होती जिसका एक कारण यह भी है कि अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति भारत की कुल आबादी का पांचवां हिस्सा है। उन्होंने कहा हिन्दुत्व के लिए अस्पृश्यता धोर कलंक है। वे अक्सर कहा करते थे कि शोषितों, दलितों, वंचितों एवं अछूतों की सेवा एवं उनका सहभागी बनने के लिए मेरा जन्म हो तो अछूतों के घर ही हो, ऐसी उनकी आंतरिक कामना थी।

ऋगवेद से बौद्ध काल एवं बौद्ध धर्म के पतन से लेकर नवजागरण काल तक के भारतीय समाज के लगभग 3500 साल के सामाजिक इतिहास में वर्ण व्यवस्था, जाति–विभेद, अस्पृश्यता पतनशीलता दासता और जाति प्रथा ने ही अंतर्जातीय विवाह संस्था को प्रतिबंधित किया संभवतः इसी ने अस्पृश्यता को जन्म दिया। अस्पृश्यों के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक अधिकार छीनकर उन्हें दलित–वंचित एवं सामाजिक व्यवस्था में निःसहाय होने पर मजबुर किया गया।

गाँधी जी द्वारा आर्थिक दृष्टिकोण से पिछड़े दलित समाज को मजबूत करने के लिए हिन्दू समाज की

कुरितियों तथा दलितों–वंचितों के मन में देश एवं धर्मांतरण की भावना को पटाक्षेप करने में गाँधी जी का अतुलनीय योगदान रहा है।

इतिहास साक्षी रहा है कि हर युग में सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक क्रांतियाँ होती रही है– जिसमें ज्योतिबा फूले ने अपने सीमित प्रभाव के साथ मात्र शिक्षा के जरिए दलितों में चेतना लाने की कोशिश की और उन्होंने समाज में व्याप्त पुरातनवाद को ध्वस्त करने के अपने उद्देश्य में सफल हुए। उन्होंने जहाँ सोए हुए समाज को जहाँ जगाने एवं शिक्षा का अलख जगाने का प्रयास किया, वहीं राजा राममोहन राय जैसे महापुरुषों ने समाज को एक प्रगतिशील चिंतन की ओर ले जाने में अपना भरपूर सहयोग प्रदान किया। ऐसे और भी कई प्रसिद्ध नाम हैं जिन्होंने दलितों की मुक्ति का मार्ग–प्रशस्त किया था।

1932 ई० में पुना समझौते पर हस्ताक्षर होने के उपरांत गांधी जी ने हरिजनों के उत्थान और अस्पृश्यता निवारण हेतु अबिलम्ब ही अपने कदम बढ़ाएं। इस दिशा में उनके द्वारा किये गये प्रयासों को तीन मागों में बाँटा जा सकता है– हरिजन सेवक संघ की स्थापना करना, हरिजनों की मंदिर में प्रवेश दिलाना और हरिजनों को समाज में उनका हक दिलाने हेतु देशव्यापी दौरा करना आदि।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः हम यह कह सकते है कि दलितों के उत्थान एवं उनके उन्मूलन के अभियान में महात्मा गांधी ने जितना समर्पण दिखाया और जिस उत्साह के साथ उन्होंने कार्य किया, उसके परिणाम तो उस समय अधिक कारगर नहीं दिखाई दिए लेकिन इसका अर्थ यह कदापि नहीं लगाया जा सकता कि हिन्दू समाज ने उनकी उपेक्षा की। उनके अस्पृश्यता निवारण संबंधी प्रयासों को स्मरण करके उनका मूल्यांकन करते समय हमें यह याद रखना होगा की किसी भी समाज में चेतना तुरंत नहीं आती। जिस प्रकार परंपरा की बेड़ियों को तोड़कर हिन्दू समाज को बाहर निकलने में समय लगा ठीक उसी प्रकार गांधी जी के तात्कालिक प्रयासों का असर तो कस दिखा परंतु इसके दूरगामी परिणाम अधिक दिखाई दिये और समय के साथ–साथ अस्पृश्यता उन्मूलन के प्रति लोगों ने अपने उत्तरदायित्व को समझा। जिससे अस्पृश्यता निवारण का यह मार्ग आसान होता गया।

संदर्भ सूची

1. गांधी एम. के., (1949) *ऑटोबायोग्राफी द स्टोरी ऑफ माई एक्सपेरिमेंटस विद ट्रुथ,* नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, पृष्ठ – 732।
2. कुमार विजय, (2007) *गांधी द मैन हीज लाईट एंड विजन,* रिजल पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 50, 63।
3. सिंह एम. के., (2010) *महात्मा गांधी एंड नेशनल इंटीग्रेशन,* रजत पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 169, 223।
4. जैन कैलाश चंद्र, (2006) *भारत का राष्ट्रीय आंदोलन,* यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 382, 425।
5. फारुथि आर. के., (2008) *आधुनिक भारत 1919–1939 ई0,* अर्जुन पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली, पृष्ठ 266, 268।
6. नन्दा बी. आर. प्रकाश, (2008) *महात्मा गांधी ए बायोग्राफी,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, पृष्ठ 97, 103।
7. पाठक रश्मि, (2010) *भारत में अंग्रेजी राज,* अर्जुन पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली, पृष्ठ 382, 425।
8. चंद्रा विपिन, (2015) *आधुनिक भारत के इतिहास,* गैलेरियस प्रिंटर्स, नई दिल्ली, पृष्ठ 289, 329।
9. धवन एम. एल., (2008) *भारत का राष्ट्रीय आंदोलन एवं स्वतंत्रता संघर्ष 1857–1947 ई0,* अर्जुन पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली, पृष्ठ 329, 289।

****